IJAER/ May-June 2023/Volume-12/Issue-3 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

महर्षि अरविन्द का नववेदान्त शिक्षा दर्शन

1.वैशाली मौर्या, शोधार्थिनी, शिक्षाशास्त्र विभाग, मोनाड विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश.
2. प्रोफेसर, डॉ0 महीप मिश्रा, विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, मोनाड विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश.

1.1 प्रस्तावना

श्री अरविन्द के विचारों पर उनके विस्तृत अध्ययन तथा विभिन्न संस्कृति की जानकारी का प्रभाव तो है ही वे प्लेटों तथा अरस्तु जैसे महान ग्रीक विचारकों के विचार से भलीभांति परिचित थे। वे आधुनिक पाश्चात्य दर्शन के कुछ आदर्शवादी तथा प्रत्ययवादी विचारों से भी पूर्णतया परिचित थे। उनके वैचारिक लेखों में स्पष्ट संकेत मिलता है कि उन्हें हेरोल, व्हाइटहेड, तथा बर्गसां आदि के तत्वमिमांसीय विचारों की पूर्ण जानकारी थी। साथ ही साथ उन्होंने भारतीय दर्शनों का गहन अध्ययन किया था। विशेषतः 'अद्वैत वेदान्त' तथा 'योग' दर्शनों का तो उनके विचारों पर स्पष्ट प्रभाव प्रतीत होता है।[1] किन्तु उनकी रचनाओं को पढ़कर ऐसा लगता है कि उन्होंने अपने चिन्तन में सभी विचारों को सर्वथा अपने ढंग से सजाते हुए एक सर्वथा व्यापक तथा नवीन सत्–दृष्टि स्थापित करने की चेष्टा की है। उनकी इस मूल दृष्टि का पूर्णतया निश्चित विवरण देना सरल नहीं है, कम से कम प्रचलित दर्शनशास्त्रीय 'लेबलों' में हम किसी को भी उनके विचार पर चिपका नहीं सकते। बड़े ही विस्तृत अर्थ में उनके दर्शन को 'अध्यात्मवाद' का एक उदाहरण कहा जा सकता है। इसे अध्यात्मवादी इस आधार पर कहा जा सकता है कि एक ओर तो यह 'सत' के स्वरूप को आध्यात्मिक मानता है, तथा साथ ही यह एक 'चरम आदर्श' की भी कल्पना करता है जिसकी ओर पूर्ण मानवशक्ति के प्रवृत्त होने की अनुशंसा की गई है। किन्तु उनका यह आदर्शवाद या अध्यात्मकवाद न तो 'अमूर्त एकवाद' के समान है औन न 'एकेश्वरवाद' के समान है।[2]

1.2 शिक्षा के लक्ष्य और साधन

शिक्षा, जीवन दर्शन से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है। जीवन एक प्राणात्मक प्रक्रिया है जो व्यक्तिगत और समूहगत रूपों में बाह्य रूप से सभ्यता के भौतिक रूपों एवं आन्तरिक रूप से सांस्कृतिक विकास के माध्यम से जीवन की आवश्कताओं को सन्तुष्ट करने की क्रिया में संलग्न हैं।[3] यहां भी पशु एवं मानव जीवन में अन्तर करना आवश्यक हैं। जबकि पाश्विक जीवन कोरा जैवकीय है, मानव जीवन जैवकीय के साथ–साथ सांस्कृतिक भी है।[4] यहां सांस्कृतिक के प्रत्यय में विकासशील, परिष्कार, भावनात्मक, संकल्पात्मक एवं बौद्विक विकास सम्मिलित है जो कि मानव जीवन के प्रमुख कारक हैं, जिनकी प्रगति के साथ–साथ मानव जीवन

1 Haridas Chaudhary (Ed.) The Integral Philosophy of Sri Aurobindo, p. 19.
2 The Life Devine, p. 8.
3 Sri Aurobindo, The Life Divine, p. 18.
4 Sri Aurobindo, The Life Divine, p. 606.

की गुणात्मक श्रेष्ठता बढ़ती हैं। जीवन की इस प्रक्रिया के परिप्रेक्ष्य में दर्शन से तात्पर्य मानव जीवन के सभी पहलुओं, सभी सामान्य समस्याओं के विषय में विवेक एवं अनुभव के आधार पर पहुंचे हुए सामान्य निष्कर्षो से है जो जीवन के साध्यों और जीवन दोनों की व्यवस्था करते हैं। मानव संस्कृतियों में अन्तर होने के कारण पूर्व और पश्चिम में भिन्न जीवन दर्शन दिखलाई पड़ता है।[5]

1.3 श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का उद्देश्यः

श्री अरविन्द के जीवन दर्शन के विवेचन से शिक्षा के क्षेत्र में लक्ष्य को निकाला जा सकता है। शिक्षा का लक्ष्य व्यक्ति का आध्यात्मिक विकास, उसका दैवी रूपान्तरण, उसके तन, मन, प्राण का पूर्ण विकास, उसको मानव से ऊपर उठाकर महामानव बनाना है। शिक्षा का लक्ष्य मनुष्य को न केवल अपने बल्कि समष्टि के मोक्ष की ओर ले जाना है। शिक्षा के इस लक्ष्य में तन, मन, प्राण सभी का विकास शामिल होगा। इस प्रकार जैसे जीवन में वैसे ही शिक्षा में भी श्री अरविन्द पूर्णवादी है। उन्होंने लिखा है,'' शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य प्रगतिमान आत्मा को सहायता देना और उसमें से सर्वोत्तम तत्व को बाहर निकालकर उसे श्रेष्ठ उपयोग के लिए पूर्ण बनाना है।''[6] अस्तु, श्री अरविन्द ने शिक्षा के सीमित और एकांगी लक्ष्यों का सब कही विरोध किया है। मानव जीवन के विकास में वे प्रगति को कहीं रोकना नहीं चाहते। इसीलिए उन्होंने योग में शिक्षा की चरम परिणति मानी है क्योंकि अन्य कोई भी साधन मनुष्य का पूर्ण विकास करनें में समर्थ नहीं है।[7]

योग का अर्थ समन्वय है। यह समन्वय अथवा संकल ही श्री अरविन्द के चिन्तन की कुंजी है। न केवल उनके शिक्षा दर्शन बल्कि उनके आध्यात्मशास्त्र, ज्ञानशास्त्र, राजशास्त्र और समाजशास्त्र को समझने के लिए भी उनका यह मूल सिद्वांत याद रखना चाहिए कि प्रकृति मे सब कहीं व्यक्ति, समुदाय और मानवता का लक्ष्य समन्वय हैं। यह समन्वय सबसे पहले व्यक्ति के आन्तरिक तत्वो मे प्राप्त किया जायेगा इसलिए शिक्षा के द्वारा व्यक्ति की शारीरिक, प्राणात्मक और मानसिक प्रवृत्तियों का संकलन होगा। यह संकल नही आध्यात्मिक स्थिति है। दूसरे शब्दों में, आध्यात्मीकरण के बगैर यह संकलन प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए श्री अरविन्द की शिक्षा व्यवस्था में सब कही संकलन का सिद्वांत अपनाया गया है। यह संकलन ही सामाजिक अथवा राष्ट्रीय जीवन का मूल रहस्य हैं।[8] अरविन्द के शिक्षा दर्शन में शिक्षा का एक लक्ष्य समाज के विभिन्न सम्प्रदायों अथवा राष्ट्र के विभिन्न अंगों में समन्वय प्राप्त करना भी होगा। शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य अन्तर्राष्ट्रीयतावादी अथवा मानवतावादी होगा क्योकि सर्वोच्च संकलन विभिन्न राष्ट्रों का संकलन है।[9]

इस प्रकार, श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य आत्मिक विकास अथवा आध्यात्मिक विकास है।

---

5 Sri Aurobindo, Lights on Yoga, p. 15.

6 Sri Aurobindo, Lights on Yoga, p. 25.

7 Sri Aurobindo, The Life Divine, p. 446.

8 श्री अरविन्द– सिनथेसिस ऑफ योग– पृ0 2.

9 Sri Aurobindo, The Life Divine, p. 718.

उनके अपने शब्दों में, ''बालक की शिक्षा उसकी प्रकृति में जो कुछ सर्वोत्तम, सर्वाधिक शक्शिाली, सबसे अधिक अन्तरंग और जीवित है उसे अभिव्यक्त करना होना चाहिए, एक ऐसा सांचा जिसमें मनुष्य की क्रिया और विकास उनके आन्तरिक गुण और शक्ति के आधार पर चले। उसे नई वस्तुएं अर्जित करनी चाहिए, परन्तु वह उन्हें सर्वोत्तम रूप से अपने स्वयं के विकसित प्रकार और जन्मजात शक्ति के आधार पर शक्तिशाली रूप से सर्वोत्तम प्रकार से अर्जित करेगा।''[10]

1.4 शिक्षा के साधनः

श्री अरविन्द ने मानव की सीमित–असीम अथवा मानव शरीर में विभिन्न अनुभवों के लिए दिव्य आत्मा के रूप में व्यवस्था की है। उनके अनुसार, मनुष्य एक वैयक्तिक और सामूहिक अनुभव के लिए मनस, जीवन और शरीर को प्रयोग करने वाली और विश्व में आत्माभिव्यक्ति करने वाली एक आत्मा है। मनुष्य की संरचना में आत्मा के अतिरिक्त चैत्य पुरूष, भौतिक, प्राणमय, मानसिक इत्यादि कोष है। श्री अरविन्द दो प्रकार की आत्मा मानते हैं, एक तो बाह्य आत्मा जो हमारे अहंकार का आधार है और दूसरे आन्तरिक चैत्य तत्व जोकि हमारी वास्तविक वैयक्तिकता का आधार है। यह चैत्य तत्व ही चैत्य पुरूष है। पहले पहल यह शरीर, प्राण और मन के अवारण में रहता है, परन्तु जैसे–जैसे यह विकसित होता है, वैसे–वैसे यह अन्य तत्वों पर अधिकार जमा लेता है। यह चैत्य पुरूष ही शिक्षा का वाहन है। मनुष्य के अन्तर्गत और विभिन्न मनुष्यों में परस्पर सम्बन्धों की प्रकृति चैत्य होती है। अस्तु, शिक्षा के साधन विशेषतया चैत्य होने चाहिए। कम से कम वे ऐसे न हों जो चैत्य विकास में बाधक हो।[11]

श्री अरविन्द के अनुसार, ''मानव को ऐसा कुछ भी नहीं सिखाया जा सकता जोकि जीव की अभिव्यक्ति होने वाली आत्मा में निहित ज्ञान के रूप में पहले से ही छिपा हुआ न हो।'' शिक्षा का कार्य कुछ नया निर्माण करना नहीं है। वह मानव–प्राणी की सम्भावनाओं को अभिव्यक्त करती ओर विकसित करती है। वाटसन जैसे परिवेशवादी मनोवैज्ञानिक का अत्यधिक आशावाद शिक्षा का ठोस आधार सिद्वांत को ठोस मनोवैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित होना चाहिए। जैसा कि श्री अरविन्द ने संकेत दिया है, ''शिक्षा का सच्चा आधार मानव–मस्तिष्क, शिशु, किशोर और वयस्क का अध्ययन है।'' परिवेशवादियों का प्रमुख दोष यह सोचना था कि मानव–शिशु को लकड़ी अथवा मिट्टी की तरह कोई भी रूप दिया जा सकता है। अब यह स्थापित हो चुका है कि मानव इस जगत में कुछ विशिष्ट संरचना, शक्तियों और कौशल लेकर आता है और मानव–प्रकृति जैसी कोई चीज है जिसको विशिष्ट परिस्थितियों में सीमित रूप से ही बदला जा सकता है यद्यपि उसके विकास की सम्भावनाएं असीम हैं। अस्तु, मानव–प्रकृति के अनुरूप होनी चाहिए।

श्री अरविन्द के दर्शन में शिक्षा के लक्ष्य को स्पष्ट करते हुए नार्मन डाउसेट ने लिखा है, ''शिक्षा शब्द का अर्थ प्रत्येक मानव प्राणी में अन्तरंग में छिपे प्रसुप्त और अर्नाअभिव्यक्त रहस्यमय तत्व को अभिव्यक्त करना है, रहस्यमय इसलिए क्योंकि वह इन्द्रियजन्य नहीं है बल्कि व्यक्ति का आन्तरिक सत्य है और क्योंकि वह

10 Sri Aurobindo, The Life Divine, p. 476.

11 Sri Aurobindo, The Life Divine, p. 688.

व्यक्ति का वह अज्ञात अंग है जिसे अभी पूर्ण आकार विकसित होना है यह रहस्यमय तत्व चित्त अथवा अन्तःकरण है। श्री अरविन्द के अनसार अन्तःकरण शिक्षा का वाहन अथवा यन्त्र है अन्तःकरण मे चित्त, मनस, बद्वि और सामानयेत्तर शक्तिया सम्मिलित है चित्त भूतकालीन स्मृतियों और मानसिक संस्कारों का आगार है। वह सक्रिय और निष्क्रिय दोनों प्रकार का होता है। उसके सक्रिय रूप को शिक्षित करने की आवश्यकता हैं।

मनस विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों से संवेदनाएं ग्रहण करता है। बुद्वि विचार का यन्त्र है। उसमें निर्णय, कल्पना, स्मृति, निरीक्षण, विश्लेषण, संश्लेषण, तुलना, वर्गीकरण, सामान्यीकरण, अनुमान, निष्कर्ष इत्यादि विभिन्न कार्यो का समावेश है। शिक्षा की प्रक्रिया में इन सबका प्रशिक्षण किया जाता है। सामान्येत्तर शक्तियों में मनःपर्याय, मनोगति आदि ऐसी अनेक शक्तियों का समावेश है जो सामान्य रूप से साधारण मनुष्यों में नहीं पाई जाती। श्री अरविन्द ने यौगिक शिक्षा के द्वारा इनके भी विकास की सम्भावनाएं दिखलाई हैं।

शिक्षक छात्र का निर्माता एवं अभिभावक होता है। शास्त्रों में शिक्षक को ईश्वर से भी बड़ा माना गया है। अतः शिक्षकों को इस बात के लिए तैयार रहना चाहिए कि वे छात्रों की क्षमता, रूचि एवं भविष्य को ध्यान में रखते हुए उन्हें सर्वोत्तम शिक्षा दें। अध्यापक समूचे ज्ञान और पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों के परस्पर सम्बन्ध लगातार दिखाता रहे, अर्जित तथ्यों और सिद्धांतों के अनुप्रयोग और उदाहरण पेश करता रहे और स्वीकृत ज्ञान और कार्य–रीति के बीच की विसंगितयां प्रकाश में लाता रहे। कार्य की इकाइयों, मसलों व प्रयोजनों के प्रयोग से भी विभेदीकरण और समाकलन का रास्ता खुल जाता है। यह सब कुछ कर लेने के बाद यह याद रखना बड़ा जरूरी है कि सामान्यीकरण के लाभप्रद होते हुए भी अध्यापक का दृष्टिकोण काफी लचीला होना चाहिए, ताकि वह विचार कर सके कि हर छात्र अनुपम है और उसे उसकी विशिष्ट आवश्यकताओं और रूचियों के विकास का प्रबन्ध करना है। शैक्षणिक कार्यक्रमों और अभिवृद्धि की प्रवृत्तियों में ताल–मेल के अभाव के कारण शिक्षा का बहुत सा प्रयास निष्फल जाता है। वह ताल–मेल कैसे बैठाया जाय, इसके सम्बन्ध में निश्चयपूर्वक आदेश देना सम्भव नहीं। यह तो व्यक्तिगत रूप से अध्यापकों पर निर्भर करता है कि वे उपयुक्त सिद्धांतों को सामने रखे और जैसा उचित समझे, कक्षा–स्थल की स्थितियों और विद्यालय के कार्यक्रमों में उनका अनुप्रयोग करें।

1.5 श्री अरविन्द जी के शिक्षा–दर्शन का मूल्यांकन

उपुर्यक्त व्याख्या के आधार पर यह कहा जा सकता है कि श्री अरविन्द ने प्रकृतिवादियों तथा प्रयोजनवादियों की भांति बाल–केन्द्रित शिक्षा पर बल दिया है। उन्होंने शिक्षक को केवल निर्देशक, सहायक तथा पथ–प्रदर्शक के रूप में ही स्वीकार किया तथा उन शिक्षण सिद्धांतों का निर्माण किया जिनके अनुसार बालक को उसकी मातृभाषा के माध्यम से पूर्ण स्वतंत्रता के वातावरण में उसकी अभिरूचियों का अध्ययन करके प्रेम तथा सहानुभूतिपूर्वक उसकी प्रकृति के अनुसार स्वाभाविक विकास के अवसर मिलते रहे। पर ध्यान देने की बात है कि उनकी शिक्षा के उद्देश्य आदर्शवादी दर्शन पर ही आधारित रहे। वस्तुस्थिति यह है कि श्री अरविन्द विशुद्ध आदर्शवादी थे। उनका शिक्षा दर्शन आध्यात्मिक आस्था, ब्रह्मचर्य तथा योग पर

आधारित होते हुए आध्यात्मिक प्रगति का परिचायक है। यद्यपि श्री अरविन्द पर पाश्चात्य दर्शन का पर्याप्त प्रभाव रहा फिर भी उनकी महानता इस बात में हैं कि वे मूलतः भारतीय ही रहे। उन्होंने पाश्चात्य दर्शन की अच्छाइयों को लेकर भारतीयता को सुदृढ़ बनाने का प्रयास किया। संक्षेप में उनका दर्शन भौतिकता से आध्यात्मिकता की ओर ले जाता है।

श्री अरविन्द ने अनुभव किया कि भारतीयों का दृष्टिकोण शनैः–शनैः भौतिकवादी होता जा रहा है जिससे उनके अन्दर की दिव्य ज्योति बुझती जा रही है। अतः उन्होंने प्रचलित भौतिक शिक्षा की कड़ी आलोचना करते हुए बतलाया कि यह शिक्षा विदेशी हैं। इससे भारतीय संस्कृति एवं परम्पराओं का पोषण सम्भव नहीं है। भारत को तो ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो भारतीयों के मस्तिष्क तथा आत्मा की शक्ति का निर्माण तथा जीवित उत्कर्ष कर सके। इस दृष्टि से श्री अरविन्द ने पाण्डिचेरी में अरविन्द आश्रम खोला जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की तथा नए सिद्धांतों पर आधारित करके शिक्षा को एक ऐसा नया रूप देकर भारतीय जनता के समक्ष रखा जो बालक के स्वभावानुकूल हो तथा जो ब्रह्मचर्य द्वारा तप, तेज एवं विद्युत की वृद्धि से बालक के मन, शरीर, हृदय तथा आत्मा को सशक्त बना सके।

श्री अरविन्द आदर्शवादी थे। उनके दर्शन का आधार उपनिषद का वेदान्त था वे जीवन में आध्यात्मिक साधना, योग तथा ब्रह्मचर्य को विशेष महत्व देते हुए विकास के सिद्धांत में विश्वास करते थे। उन्होंने बतलाया कि विकास का लक्ष्य केवल एक नहीं है और वह है संसार में व्यापक दिव्य–शक्ति अथवा पूर्ण एवं अखण्ड चेतना को प्राप्त करना। श्री अरविन्द का विश्वास था कि विकास का यह क्रम निरन्तर चलता ही रहता है। इस विकास क्रम की एक ऐसी भी स्थिति आती है जब मानव अति–मानसिक स्तर को प्राप्त करके स्वयं अति मानव बन जाता है। उस स्तर पर पहुॅचकर मानव ज्ञान से अधिक ज्ञान तथा प्रकाश से अधिक प्रकाश की ओर बढ़ता है। इससे उसे आश्चर्यजनक शान्ति एवं वास्तविक सुख का आनन्द प्राप्त होते हुए सृष्टि के रहस्य तथा व्यापक सत्यता का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जाता है। शिक्षा का वास्तविक लक्ष्य मानव में इसी स्थिति के विकास एवं सम्पोषण से सम्बन्धित है।

1.6 शिक्षा के प्रकार और साधन

(अ) शारीरिक शिक्षाः शिक्षा का लक्ष्य मनुष्य का पूर्ण विकास है। तब फिर शारीरिक विकास की अवहेलना कैसे की जा सकती है? शरीर समस्त कर्म का माध्यम है, शारीरिक प्रशिक्षण से शरीर की पूर्णता, स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। विभिन्न प्रकार के खेलों और व्यायामों के द्वारा ऐसी आदतो, शक्तियों और गुणों का निर्माण किया जा सकता है जो मनुष्य के व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन में सफलता के लिए आवश्यक होती है। इस प्रकार शारीरिक शिक्षा अनुशासन, नीतिमत्ता और चरित्र जैसे आवश्यक गुणों के लिए ठोस आधार प्रदान करती है। विभिन्न प्रकार के गुणों के विकास के लिए विभिन्न प्रकार के खेलो की सहायता ली जा सकती है। श्री अरविन्द आश्रम में शारीरिक शिक्षा के लिए भारतीय और पाश्चात्य दोनों प्रकार के व्यायामों और खेलों को अपनाया गया है। शारीरिक शिक्षा में ब्रह्मचर्य भी आवश्यक है क्योंकि मानसिक नियन्त्रण के लिए ब्रह्मचर्य अनिवार्य है। वास्तव में श्री अरविन्द की शारीरिक

शिक्षा का लक्ष्य शरीर का दैवी रूपान्तर है, केवल उसकी भौतिक शक्ति अथवा कशलता मात्र नही है इसीलिए उन्होने ब्रह्मचर्य पर इतना अधिक जोर दिया है श्री अरविन्द के शिक्षा दर्शन मे यह बात ध्यान मे रखनी आवश्यक है कि किसी भी प्रकार की शिक्षा सर्वांग शिक्षा के एक समीचीन अंग के रूप में ही काम करती है सभी पकार की शिक्षा का एकमात्र लक्ष्य मानव का सर्वांग विकास है अस्त शारीरिक शिक्षा केवल शरीर की शिक्षा मात्र न होकर मानव के सवाग विकास मे शारीरिक विकास को आग बढ़ाने की शिक्षा है यही बात धामिक, नैतिक, और मानसिक शिक्षा के बारे मे भी कही जा सकती है।

शिक्षक को बालक के यन्त्र का विकास करना है। प्रत्येक बालक में जिज्ञासा, अन्वेषण एवं विश्लेषण की प्रवृत्ति होती हैं। सबसे पहले स्तर पर शिक्षक को बालक की मानसिक क्रिया को सक्रियता प्रदान करना और उसके चरित्र को पूर्ण बनाना चाहिये। बालक से स्वभावतः बौद्विक ज्ञान की उत्सुकता होती है। अस्तु, उसकी अनुकरणात्मक एवं कल्पनात्मक शक्ति का विकास स्वाभाविक रूप से किया जाना चाहिये। श्री अरविन्द के अनुसार प्रारम्भ में पहले बालक को प्रोत्साहित किया जाना चाहियें। यही शिक्षक का प्रथम कार्य हैं। आगे चलकर यह स्वयं अनेक बातें सीख लेगा।

1.7 निष्कर्ष

संक्षेप में कहा जा सकता है कि श्री अरविन्द सतत शिक्षण, मानवीकरण, व्यक्तिगत आवश्यकता एवं रूचि के अनुसार शिक्षण के पक्षधर हैं। वे किसी प्रकार के बालक पर दवाब के विरूद्व हैं। उनके अनुसार शिक्षक और शिक्षार्थियों के तथा शिक्षार्थियों के मध्य परस्पर संलाप एवं विचार विमर्श को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये। बालक के मस्तिष्क को हर स्तर पर सक्रिय रखना चाहिये और उसकी मानसिक योग्यताओं – अवलोकन, अनुकरण, विवरण, स्मृति, निर्णय, विश्लेषण, तर्क और कल्पना और रूचियों का ठीक–ठीक प्रकार से विकास किया जाना चाहिये। शिक्षण विज्ञान को रूचिकर एवं सामाजिक बनाना चाहियें बालक को उसकी आवश्कताओं, योग्यताओं और आकांक्षाओ अनुरूप विचरण का अवसर दिया जाना चाहिये।

श्री अरविन्द जी के अनुसार सर्वांगीण शिक्षा को राष्ट्रीय शिक्षा है जो राष्ट्र के नियन्त्रण में राष्ट्र के समस्त लोगों को राष्ट्रीय पद्वति से दी जाती है। इन्होंने इस आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा की पूरी योजना भी तैयार की थी। परन्तु इन्होंने अपने पांडिचेरी आश्रम में जिस शिक्षा की व्यवस्था की थी वह योग साधना की दृष्टि तो भारतीय थी परन्तु अपनी पाठ्यचर्या की दृष्टि से अर्न्तराष्ट्रीय थी, उसमें देश–विदेश की अनेक भाषाओं एवं ज्ञान–विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के अध्ययन की आज भी व्यवस्था है। यदि हम पांडिचेरी के श्री अरविन्द अर्न्तराष्ट्रीय शिक्षा कों ध्यानपूर्वक देखे–समझे ंतो स्पष्ट होता है कि वह संकुचित राष्ट्रीयता के दायरे से बाहर की शिक्षा है, वह अन्तराष्ट्रीय स्तर की शिक्षा है, परन्तु उसकी आत्मा योग शिक्षा ही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. लाल, रमन बिहारी : पन्द्रहवाँ संस्करण "शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार" रस्तोगी पब्लिकेशन्स, शिवाजी रोड, मेरठ–250002, 2003
2. लाल, रमन बिहारी व सुनीता पलोड : प्रथम संस्करण, "शैक्षिक चिन्तन एवं प्रयोग", आर0लाल बुक डिपो, निकट राजकीय इण्टर कॉलिज, मेरठ–250001, 2006
3. मित्तल, एम0एल0 : "उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक", इन्टरनैशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ–250001, 2006
4. माथुर, एस0 एस0 : "शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार", विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–282002, 2010
5. ऑबेराय, सुरेश चन्द्र : "शिक्षा तकनीकी के तत्व एवं प्रबन्धन", आर0 लाल बुक डिपो, निकट राजकीय इण्टर कॉलेज ,मेरठ–250001, 2005
6. पाठक, पी0डी0 व जी0एस0डी0त्यागी : "शिक्षा के सामान्य सिद्धान्त", विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–282002, 2009
7. पाण्डेय आर0 एस0 : "भारतीय शिक्षा के विभिन्न आयाम" विनाद पुस्तक मन्दिर, आगरा–282002, 2004
8. पचौरी गिरीशः : प्रथम संस्करण, "उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक" इन्टरनैशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ–250001, 2006
9. राठौर, कुसुम लता : प्रथम संस्करण, "उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक", आर0लाल बुक डिपो, निकट राजकीय इण्टर कॉलिज, मेरठ–250001, 2009
10. शर्मा, आर0 ए0 : "पाठ्यक्रम विकास एवं अनुदेशन", आर0 लाल बुक डिपो निकट राजकीय इण्टर कॉलेज मेरठ–250001, 2008
11. शर्मा, आर0 ए0 : "तत्वमीमांसा, ज्ञानमीमांसा, मूल्यमीमांसा एवं शिक्षा", सूर्या पब्लिकेशन, निकट राजकीय इण्टर कॉलिज,मेरठ–250001, 2008
12. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमारः द्वितीय संस्करण, "शिक्षा दर्शन", एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटरर्स, बी–2, विशाल एन्क्लेव,नई दिल्ली, 2007
13. शर्मा, आर0ए0 : "शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया", आर0लाल बुक डिपो, निकट राजकीय इण्टर कॉलिज, मेरठ–250001, 2012
14. तिवारी, केदारनाथ : पंचम् संस्करण, "तत्व मीमांसा एवं ज्ञानमीमांसा", मोतीलाल बनारसीदास, 41,यू0ए0बंग्ला रोड,जवाहरनगर, दिल्ली–110077, 2014
15. डा0अर्जुन मिश्र दर्शन की मूल धाराएँ, प्रकाशक, मध्यपदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1989

16. शर्मा चन्द्रधर, पाश्चात्य दर्शन, प्रकाशक, नरेन्द्रप्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसीदास, जैन, दिल्ली 1991.